REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 7 | APRIL - 2019

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण के सवाल

(पत्रकारिता और स्वतंत्रता आंदोलन के विशेष संदर्भ में)

अमृत कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर, जनसंचार विभाग, झारखण्ड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, रांची.

सारांश-

हिंदी प्रदेशों में नवजागरण का प्रारंभ1857 के स्वतंत्रता संग्राम से माना जाता है। हिंदी नवजागरण का यह स्वरूप सामंती व्यवस्था का विरोधी था। इस संग्राम में भारतीय जाति व्यवस्था की कार्यप्रणाली को दरकिनार करते हुये सभी जाति के लोगों को सैनिक के रूप में लड़ने का अवसर प्रदान किया। इस संग्राम की प्रमुख विशेषता थी हिंदी प्रदेशों की अग्रणी भूमिका। आचार्य द्विवेदी केवल एकनाम न होकर एक युग का है। और इस युग में हिंदी नवजागरण के कई सवाल थे।सर्वाधिक महत्वपूर्ण सवाल था अंग्रेजी शासन के विरुद्ध जनमानस तैयार करना। द्विवेदी जी ने अपनी लेखनी के माध्यम से अंग्रेजी विरोधी अलख को हिंदी प्रदेशों में जगाया। उन्होंने अपनी लेखनी में गरीबी के मुद्दों को उठाया तथा अंग्रेजी सरकार को इसका जिम्मेदार बतातेहुये कहा 'इस देश में अंग्रेजों के पधारते ही उनकी सत्ता का सूत्रपात होते ही, यहाँ की स्थिति में फेरबदल शुरू हो गया। यहाँ की संपत्ति ब्रिटेन गमन करने लगी। हुकूमत के डैम पर इस देश की जड़ पर कुराघात होने लगा।' द्विवेदी जी ने कर और लगान के अंतर को स्पष्ट किया। द्विवेदी जी संपादित 'सरस्वती' के लेखों ने अंग्रेजी शासन की शोषणकारी नीतियों के विरुद्ध चेतना फैलाने का काम किया। उन्होंने अपने लेखन में दरिद्रता और किसान को विशेष महत्व दिया। परिणामतः अंग्रेजी शासन के विरुद्ध जो जनमानस तैयार हुआ वह हर जातीय समुदाय व सभी धर्म से संबंध रखता था।

शब्द कुंजी- स्वाधीनता, दरिद्रता, किसान, शोषण, संप्रदाय.

भूमिका-

हिन्दी प्रदेशों में नवजागरण का प्रारम्भ 1857 के स्वतंत्रता संग्राम से माना जाता है। हिन्दी पत्रकारिता का जन्म हीस्वतंत्रता, स्वभाषा-प्रेम, सामाजिक सुधार, शोषण और भ्रष्टाचार के खिलाफ संघर्ष के शस्त्र के रूप में हुआ था। पत्रकारिता द्वारा भारतीयों ने अंग्रेजों के विरुद्ध अपने ढंग की लड़ाई लड़ी थी। उसकी इस युद्धमुद्रा की प्रेरणा ने विदेशी पत्रकारों का भी योगदान रहा। जेम्सअा. हिक्की पहले पत्रकार थे जिन्होंने प्रेस की आजादी के लिए ब्रिटिश सरकार को खुली चुनौती दी। उनकी पत्र नीति थी- " यह राजनैतिक और व्यापारिक पत्र खुला तो खबरें सबके लिए हैं, परंतु प्रभावित किसी किसी से नहीं।' इसका तात्पर्य पत्रकार की स्वतंत्रता से था। उसे सत्ता, संपत्ति से खरीदा नहीं जा सकता। उसके चिंतन, विचार पर कोई भी दबाब बेअसर हो जाता है। साहसी पत्रकार हिक्की ने पत्रकारिता के प्रति अपने समर्पित भाव तथा अटूट निष्ठा को अभिव्यक्ति करते हुए लिखा है कि " अपने मन और आत्मा की स्वतंत्रता के लिए अपने शरीर को बंधन मेंडालने में मुझे आनंद आता है।'

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में पत्रकारों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। सन1857 के भारतीय स्वाधीनता संग्राम के समय समाचार पत्रों का बड़ा प्रसार नहीं हुआ था, कई प्रशासनिक दिक्कतें थी फिर भी देश में ऐसे पत्र निकले जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना में बड़ा योगदान दिया। जिनको हम आज देश के बड़े नेता मानते हैं उन्होंने जनता को नेतृत्व, समाचार पत्रों के माध्यम से ही देना शुरू किया। 15 नवंबर, 1851 को श्री दादाभाई नौरोजी ने गुजरती में 'रास्तगुफ़्तार' नामक पत्र निकाला था। राजा राममोहन राय का 'बंगदूत' जो एक साथ बंगला, हिंदी, फारसी और अंग्रेजी में छपता था, समाज सुधार का पत्र था। 'ज्ञाननेशन' भारतीय भाषाओं में शिक्षा की और बंगला भाषा को सरकारी भाषा की मांग

करने के लिए प्रसिद्ध था। सन 1857 में 'पयाम-ए-आजादी' के नाम से उर्दू तथा हिंदी में एक पत्र प्रकाशित हुआ जो अंग्रेजों के विरुद्ध क्रांति का प्रचारक था और जिसको जब्त कर लिया गया। जिस किसी के पास उसकी प्रति पाई जाती थी, उसे राजद्रोह का दोषी माना जाता था और कठोर से कठोर सजा दी जाती थी। सन 1857 में ही हिंदी के प्रथम दैनिक'समाचार सुधावर्षण' और उर्दू-फारसी के दो समाचार पत्रों 'दूरबीन' और 'सुलतान-उल-अखबार' के विरुद्ध यह मिकदमा चला कि उन्होंने बादशाह बहादुरशाह जफर का एक फरमान छापा जिसमें लोगों से मांग की गई थी कि अंग्रेजों को भारत से बाहर निकाल दें। इस घटना के बाद लार्ड केनिंग का गैगिंग एक्ट पारित हुआ, जिसमें समाचार पत्रों पर बहुत बंधन लगाए गए थे। खुद लार्ड केनिंग का मानना था कि जो समाचार पत्र भारतीयों द्वारा छापे जाते हैं सूचना देने के बहाने राजद्रोह लोगों के दिलों में भरा जाता है।

1857 के स्वतंत्रता-संग्राम की सर्व प्रमुख विशेषता थी इसके स्वरूप का राष्ट्रीय होना। संग्राम के स्वरूप को राष्ट्रीय बनाने का कार्य सेना व बुद्धिजीवियों द्वारा आमजन की सहभागिता से किया गया। इस संग्राम में कई जमींदार तथा राजा अपनी जमीन व सत्ता बचाने हेतु मूलतः शामिल हुये लेकिन व्यापक जनसमर्थन ने जमींदारों और राजाओं की निजी लड़ाई को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान कर दिया। भारतीय इतिहास के इस महान अध्याय में सत्ता पर काबिज जन बस नेतृत्व को प्रतिकात्मक रूप से स्वीकृति प्रदान कर रहे थे, असल सत्ता सैनिक व जनता के हाथों में थी। व्यापक जनाक्रोश ने राजाओं को अंग्रेजी शासन के विरुद्ध बिगुल फुकने पर विवश किया। अंग्रेजों ने जमींदारों और साहूकारों के पक्ष में जीतने भी कानून बनाए थे, संबंधित क्षेत्र में भारतीय सेना का कब्जा होने के उपरांत वहाँ से किसानों के शोषण संबंधी कानून समाप्त कर दिये गए। सेना में किसान परिवार से संबंध रखने वाले सैनिकों ने इस संग्राम को नेतृत्व प्रदान किया। फौजी किसान सैनिकों के साथ गैर फौजी किसानों ने मिलकर अंग्रेजों से लोहा लिया। और बड़े स्तर पर सवर्ण और गैर सवर्ण दोनों किसानों ने अंग्रेजों का विरोध किया। भारतीय संदर्भ में वर्ण की सीमाओं का टूटना एक बड़ी सांस्कृतिक व सामाजिक घटना थी तथा राष्ट्रीय चेतना हेतु अतिआवश्यक चरित्र। इस संग्राम में हिन्दू सैनिकों ने मुस्लिम शासक के नेतृत्व को स्वीकार कर सांप्रदायिक सौहद्र का परिचय दिया तथा यह साबित किया की राष्ट्र पहले है और धर्म उसके बाद। 1857 के संग्राम से भारत में जो नवजागरण का काल आया उसे आगे के युगों में वैचारिक स्तर पर मजबूत बनाने का काम जारी रखा गया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका काल नवजागरण काल की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

द्विवेदी जी के लेखन सभी युगों और समाजों पर लागू होने वाले शाश्वत सिद्धांतों की चर्चा नहीं की गयी है। उनके लेखन में वस्तुनिष्ठता है, उनकी विवेचना का केंद्रबिंदु भारत की निर्धन जनता है। निर्धन जनता केन्द्रित होने से का अदृश्य आशय है समाज के हाशिए का वर्ग। भारत के निर्धनता के संबंध में एक तथ्य सर्वविदित है कि समस्त निर्धनों की जनसंख्या का अधिकांश (पूर्ण से थोड़ा सा कम) भाग निम्न जतियों (वर्ण व्यवस्था कि वर्तमान श्रेणी के अनुसार) का है। उनके अनुसार समस्या समाधान सर्वाधिक महत्वपूर्ण था। और सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या थी निर्धनता। द्विवेदी जी का उद्देश्य था देश की दशा के प्रति शिक्षित जनों को सजग करना।

भारत में हमेशा से ही कई विचारधाराएँ एक साथ समाज में मौजूद रहीं हैं। उदारपंथी पूँजीपतियों के अनुसार अंग्रेजों ने भारत में नई सभ्यता का प्रसार किया अर्थत अंग्रेजों के आगमन से देश में सकारात्मक परिवर्तन हुआ वहीं द्विवेदी जी ने निर्धनता का स्पष्ट व मुख्य कारण अंग्रेजी राज को माना। द्विवेदी जी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि स्वाधीनता के बिना सम्पत्ति वृद्धि के नियम बनाकर और उसके अनुरूप व्यवहार करना तथा संपत्ति को नष्ट होने से बचाना बहुत कठिन काम है। इस प्रकार उन्होंने भारतीय समस्या का मूल कारण गुलामी को माना। द्विवेदी जी ने अंग्रेजों के आने के बाद हुये व्यवस्था परिवर्तन के बारे में विवेचित किया है कि पुराने जमाने में, हिंदुस्तान में, जमीन को व्यक्तिगत स्वामित्व न था। हर आदमी अपनी अपनी जमीन का मालिक था। राजा बस उससे जमीन कि पैदावार का छठा हिस्सा ले लिया करता था। बस राजा का इतना ही हक़ था। वह एक प्रकार का कर था लगान नहीं। कर और लगान के अंतर को द्विवेदी जी ने अपनी लेखनी में स्पष्ट किया। उनके अनुसार कर वह लेगा जो जमीन का मालिक नहीं है तथा लगान वह लेगा जिसने जमीन पर अपना स्वामित्व कायम कर लिया है। उन्होंने सामंतवाद के संदर्भ में यह मत दिया है कि चाहे वह पुराना सामंतवाद हो या अंग्रेजों के आने के बाद का नया सामंतवाद दोनों में ही प्रजा शोषित व दरिद्र थी। दोनों सामंतवाद के मध्य अंतर बताते हुये उन्होंने कहा कि पहले अकाल में इस तरह लाखों आदमी जान से हाथ नहीं धोते थे। द्विवेदी जी द्वारा संपादित पत्रिका सरस्वती में अगस्त 1915 को ईश्वरदास मारवाड़ी का एक लेख 'भारतीय किसानों के उद्धार के उपाय' प्रकाशित हुआ। प्रकाशित लेख के अनुसार अन्य देशों की तुलना में हिंदुस्तान के किसानों को ज्यादा लगान अदा करना पड़ता है। किसान लगान अदायगी के लिए साहूकार से कर्ज़ भी लेते थे और कर्ज वसूल करने में महाजन को अंग्रेजी न्यायव्यवस्था साथ देती थी। सूदखोर और महाजन अंग्रेजों द्वारा संरक्षित वर्ग थे। क़ानूनों का सुधखोरों के पक्ष में होने के कारण भारत में बड़े स्तर पर भुखमरी का दौर शुरू हुआ।

अंग्रेजी व्यवस्था ने इस प्रकार रुख बदला की भूमि का बड़े पैमाने हस्तांतरण हो गया।1924 में 'किसानों का संगठन' शीर्षक से लेख में द्विवेदी जी ने लिखा था कि खेती करने लायक भूमि का सबसे बड़ा भाग खेती न करने वाले रहिसों के पास चलागया है। उन्होंने लिखा है खेतिहरों के पास खेती के लायक जमीन ही नहीं रही। द्विवेदी जी ने अपने लेखन में समस्या समाधान को भी स्थान दिया उन्होंने लिखा ' प्रजा के हितचिंतकों की राय है कि इस देश की जमीन प्रजा की है न की राजा और जमींदार की। जो जमीन जिस काश्तकार के कब्जे में चली आती है उसे उसी की जायदाद समझी जाए।' द्वेवेदी जी अपने लेखन में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाते थे 1914 में सरस्वती में उन्होंने एक टिप्पणी की जिसमे उन्होंने सुधारवादियों के देशभक्ति की आलोचना करते हुये कहा देश का मतलब देश में रहने वाले आदमियों से है। फिर वो एक प्रश्न करते हैंकि देश में किस तरह के आदमी रहते हैं? उत्तर देते हुये वे कहते हैं छह फीसदी व्यवसाई तेरह फीसदी वकील, डाक्टर, मास्टर, डिप्टी कलेक्टर, वेश्याएं, पुलिस और पलटन के जवान तथा अनिश्चित पेशे वाले लोग हैं। 11 फीसदी उद्योग धंधा करने वाले। बाकी 70 फीसदी किसान है। इसलिए देशभक्ति का मतलब हुआ किसानों की सेवा। उन्होंने तत्कालीन कांग्रेस के सम्मेलनों के ऊपर टिप्पणी करते हुये कहा ' कांग्रेस के सम्मेलन में कितने मामले किसान हित में विचारार्थ होते है उन मामलों में किसानों की सहभागिता कितनी होती है?' द्विवेदी जी ने स्पष्ट कर दिया था कि जबतक किसान हित कि बात नहीं होगी तबतक उसे देशभक्त संस्था, पार्टी या व्यक्ति नहीं कह सकते। द्विवेदी जी संपादित सरस्वती हिंदी की सर्वकालीन सर्वश्रेष्ठ पत्रिका मानी जाती है। खड़ी बोली हिंदी का स्वरूप गढ़ने में इस पत्रिका की महत्वपूर्ण भूमिका है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन काल में सरस्वती ने संपादन काल का मानक रचा। हिंदी के विद्वानों का मत है कि सरस्वती का अध्ययन करते समय प्रतीत होता था मानो पहली पंक्ति से लेकर अंतिम पंक्ति तक पूरी पत्रिका एक ही व्यक्ति ने लिखी है। साहित्येतर विषयों यथा विज्ञान, आर्थिकी, कृषि, उद्योग आदि को पत्रिका में महत्व दिया और उनके लेखकों को पहचान और प्रतिष्ठा दी। सरस्वती ने समाज को विकासोन्मुख और जागरूक बनाने के लिए आवश्यक सभी विषयों का सम्यक समावेश अपने पृष्ठों में किया।इसलिए सरस्वती को ज्ञान की पत्रिका माना जाता है। हिंदी साहित्य जगत में सरस्वती की ऐसी प्रतिष्ठा थी कि इस पत्रिका में किसी रचनाकार की रचना का प्रकाशन हो जाना उसके साहित्यकार होने का प्रमाण-पत्र हो जाता था। अनेक लब्धप्रतिष्ठ कवि, कहानीकार, निबंधकार सरस्वती की देन हैं। सरस्वती में किसी पुस्तक की समीक्षा उसके स्तरीय होने की कसौटी मानी जाने लगी थी। समाज ने भी सरस्वती और उसके महान संपादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को इतना आदर भाव और प्रतिष्ठा प्रदान की कि हिंदी साहित्य में एक पूरा युग द्विवेदी युगके नाम से मान्य हुआ।

द्विवेदी युग (सन् 1900 से 1920 तक)

बीसवीं शताब्दी भारतीय पत्रकारिता के लिए अत्यंत शुभ रहा। इसके आरंभ में ही(जनवरी 1900 में) 'सरस्वती' का प्रथम अंक का प्रकाशन एक ऐतिहासिक घटना है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा अनुमोदित इसके संपादक मंडल में बाबू जगन्नाथदास रत्नाकर, बाबू श्यामसुंदर दास, बाबू राधाकृष्ण दास, पं. किशोरीलाल गोस्वामी और बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री जैसे मूर्धन्य विद्वान शामिल थे। इस मासिक पत्रिका के प्रथम अंक ने ही अपनी मौलिकता से साहित्यक पत्रकारिता की समझ और दिशा बदल दी। इसके प्रकाशक चिंतमणि घोष ने इसकी श्रेष्ठता बनाए रखने के लिए बाबू श्यामसुंदरदास कोसंपादन का दायित्व सौंपा था, लेकिन जब सन् 1903 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसके संपादन का दायित्व लिया तो हिंदी की आधुनिक कला की शुरूआत हो गई। निराला जैसे व्यक्ति नेइस पत्रिका के कारण न केवल हिंदी सीखी, अपितु हिंदी कविता के सिरमौर भी बने। द्विवेदी जी ने तन-मन प्राण से इसकी ऐसी सेवा की, ऐसी आलोचना की शैली का विकास किया, भाषा की शुद्धता पर जोर दिया, ऐसी उत्कृष्ट सामग्री छापी कि समाज और साहित्य दोनों में नई ऊर्जा और चेतना आई। '' इसी वजह से कई आलोचकों और इतिहास-लेखकों ने केवल उनके 'सरस्वती' संपादन कला को ही द्विवेदी युग की संज्ञा दी है।''द्विवेदी जी ने सत्रह वर्षों तक 'सरस्वती' का संपादन किया । अपने पांडित्य, कार्यदक्षता और परिश्रम के बल पर इसे अभूतपूर्व बना दिया। इस युग में कलकत्ता से पूर्व प्रकाशित 'भारत मित्र' यदि राजनीतिक जागरण का शंखनाद कर रहा था तो 'सरस्वती' साहित्यिक और सांस्कृतिक मंच को उत्तरोतर प्रगति प्रदान कर रही थी। द्विवेदी युगीन पत्रकारितामें साहित्यिक, सामाजिक नवजागरण, राष्ट्रीय चेतना और आजादी का अलख जगाने वाले पत्र भी निकले तथा धार्मिक, सांप्रदायिक, जातिगत, नारी सुधार, आरोग्य इत्यादि विषयक पत्रकारिता की प्रवृत्तियां भी बढ़ती गईं ।

दैनिक पत्रों की प्रसार संख्या ज्यादा नहीं होने के बावजूद प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान कई दैनिक पत्र निकले और कइ साप्ताहिक पत्रों ने दैनिक रूप ग्रहण कर लिया। युद्ध की समाप्ति के बाद वे पुनः साप्ताहिक हो गए। कलकत्ता से नृसिंह (1907) मासिक पत्र था, जो शुद्ध राजनीतिक पत्र था; अल्पजीवी रहा। 'सिपाही' मासिक कानपुर से 1903 में निकला, 1904 में साप्ताहिक हुआ और शीघ्र ही दैनिक हो गया।

'अभ्युदय (1907) साप्ताहिक था, 1915 में पाक्षिक और फिर दैनिक होकर 1918 तक जीवत रहा। 'भारत मित्र' (1912) साप्ताहिक भी दैनिक हो गया। गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा संपादित'प्रताप' (1910) साप्ताहिक से दैनिक हो गया। कुछ ही पत्र ऐसे थे जो शुरूआती दौर में ही दैनिक थे। 'कलकत्ता समाचार' (1914), 'विश्वमित्र' (1916), कानपुर गजट (1913), हिंदी बिहारी (1913) और हेरंब मिश्र द्वारा काशी से संपादित 'सूर्य' (1918) ही दैनिक रूप से निकल सके।

कलकत्ता से नृसिंह देवनागर, कलकत्ता समाचार, विश्वमित्र, स्वतंत्र (1920) के अतिरिक्त गढ़वाली (1905), विप्लव, कर्मयोगी (1907), भविष्य (1918), पाटलिपुत्र (1914), दिल्ली से सद्धर्म प्रचारक (1911), अर्जुन (1913), नागपुर से 'हिंदी केसरी (1907) आदि पत्रों ने स्वातंत्र्य आंदोलन और क्रांतिकारियों के दिल में लगी आग को धधकाने में प्रबल भूमिका निर्वहित की और सरकारी कोप के शिकार भी बने। 'सरस्वती' से प्रेरणा पाकर कई मासिक पत्रों का प्रणायन भी हुआ, उदाहरणार्थ, काव्यकलानिधि (1900), ज्ञानपुर बनारस से महावीर प्रसाद मालवीय वैद्य के संपादन में कविता प्रधान पत्रिका प्रकाशित हुई। जयपुर से पं. चंद्रधर शर्मा गुलेरी के संपादन में समीक्षा प्रधान मासिक 'समालोचक' (1901), का जन्म हुआ। बाबू रामदास वर्मा ने लखनऊ से 'वसुंधरा' (1903), पं. पुत्तनलाल सारस्वत ने कन्नौज से द्विमासिक 'मोहनी' (1903), बाबू गोपाल लाल ने लखनऊ से 'देवनागर' (1907) कलकत्ता से भगवती प्रसाद दास ने झाबरमल शर्मा के संपादन में 'ज्ञानोदय' (1908), जयशंकर प्रसाद की 'इंदु' (1908) मासिक पत्रिका, अंबिका प्रसाद गुप्त के संपादन में काशी से निकली। इसी प्रकार 'हिंदी मनोरंजन' (1913), सम्मेलन पत्रिका (1913), प्रभा (1913), मनोरमा (1915) और गया से पं. ईश्वरी प्रसाद शर्मा और लाला भगवानदीन के संपादन में 1917 में मासिक पत्रिका 'श्री विद्या' का प्रकाशन हुआ। इन साहित्यिक पत्रिकाओं पर 'सरस्वती' का प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रभाव अवश्य पड़ा।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी एक सिद्धांतपालक कुशल व्यक्ति थे जो मौलिक विचारों तथा सिद्धांतों की व्यावहारिक रूप से स्थापना का प्रयास करते थे। द्विवेदी जी के जो कुछ लक्ष्य थे, उनकी प्राप्ति अपनी निश्चित धारणा के अनुसार सरस्वती के द्वारा करना उनका सिद्धांत था। अतः द्विवेदी काल की सरस्वती में केवल द्विवेदी जी की भाषा की प्रतिभा ही गठित नहीं है, उनके विचारों का भी उसमें प्रतिबिंब पड़ा है। सरस्वती की सहायता से उन्होंने भाषा के शिल्पी, विचारों के प्रचारक और साहित्य के शिक्षक तीन-तीन संस्थाओं के संचालन का काम उठाया और पूरी सफलता के साथ उसका निर्वाह किया। द्विवेदी जी के सरस्वती सम्पादन का इतिहास ऐसे ही अनेक आंदोलनों का इतिहास है। वह उनके व्यक्तित्व और तत्कालीन समाज के विकास का इतिहास भी कहा जा सकता है।

आचार्य द्विवेदी जी ने सरस्वती के जनवरी 1904 के अंक में 'संपादकों के लिए स्कूल' जून 1907 में 'संपादकीय योग्यता' तथा फरवरी 1909 में 'अमेरिका में सर्वश्रेष्ठ संपादक विषयक जो टिप्पणियां लिखी हैं, उनमें सफल संपादक बनने के लिए आवश्यक योग्यता एवं शिक्षा की चर्चा है। श्री ब्राउन संबंधी टिप्पणी के अंत में आपने लिखा है'पाठकों को इससे इस बात का अनुमान अवश्य हो जाएगा कि अमेरिका में कैसे-कैसे विद्वान, धनवान, योग्य और प्रतिभाशाली पुरुष समाचार-पत्र की संपादकी करते हैं और पत्र संपादकों का पेशा कैसा प्रतिष्ठित माना जाता है। हमारे देश के पत्र संपादकों की तरह अमेरिका के संपादक दीन हीन और दरिद्र नहीं हैं।' श्री राधेश्याम शर्मा ने लिखा है, 'द्विवेदी काल में हम साहित्य और पत्रकारिता के आपसी सम्बन्धों के ठोस उदाहरण देखते हैं। सन 1900 में उस समय की मूर्धन्य साहित्यिक पत्रिका सरस्वती निकली और 1903 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उस पत्रिका के संपादक पद से साहित्य की जो सेवा की उससे किसी भी साहित्य और पत्रकारिता के संबंधों को समझने में रुचि रखने वाले महानुभाव को अपरिचित नहीं होना चाहिए।'

आचार्य द्विवेदी एक यशस्वी संपादक, न्यायप्रिय समालोचक, कर्तव्यपरायण, सुधारक तथा परिश्रमी लेखक थे। उनका विचारवान संपादक उनके भावुक साहित्यकार पर हावी रहा। यद्पि उनके अधिकांश निबंध संपादकीय आवश्यकताओंतत्कालीन समस्याओं, सामान्य पाठकों के ज्ञानवर्धन, मनोरंजन तथा हिंदी की रिक्तपूर्ति के लिए लिखे गए किंतु फिर भी ऐसे निबंधों की कमी नहीं जो शाश्वत महत्व रखते हैं। जिस भाषा को एक राष्ट्रभाषा एवं राजभाषा का गौरव प्राप्त है, उसके परिनिष्ठित तथा स्तरीय रूप-निर्धारण में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का योगदान अविस्मरणीय है।

आचार्य द्विवेदी का व्यक्तित्व ज्ञान और बुद्धि प्रधान था। वे भावुकता को उतना महत्व नहीं देते थे जितना ज्ञान को, विवेक को। फिर भी उनकी कलम से कुछ ऐसे निबंध अवश्य निकले जिनका संपूर्ण अथवा अल्पांश भावात्मक है। अनुमोदन का अंतसंपादक की विदाई, माघ का प्रभात वर्णन आदि निबंधों में उनकी भावात्मक शैली के दर्शन होते हैं।

शोध पत्र के उद्देश्य-

- द्विवेदी जी के समक्ष हिंदी नवजागरण के कौन-कौन से प्रमुख सवाल में थे? का पता करना।

- द्विवेदी जी अपनी लेखनी के माध्यम से केवल सवाल ही करते थे या सवालों के जवाब भी सुझाते थे? का पता करना।
- द्विवेदी जी ने किस प्रकार स्वतंत्रता आंदोलन हेतु जनमानस तैयार करने में अपना योगदान दिया का पता करना

उपकलपना-

- द्विवेदी जी प्रत्यक्ष रूप से गरीबों तक अपने विचारों का फैलाव कर सके।
- द्विवेदी जी ने अपनी लेखनी के माध्यम से केवल पढ़े-लिखे लोगों को सचेत किया
- द्विवेदी जी की लेखनी ने स्वतंत्रता आंदोलन की वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार की।

महत्व-

प्रस्तुत शोध पत्र में द्विवेदी जी द्वारा किए जा रहे पत्रकारिता का तत्कालीन समाज पर हो रहे प्रभाव का पता चला है साथही संदेश किस प्रकार से आम जन तक प्रेषित होता है और उसका प्रभाव क्या होता है का पता चला है। प्राप्त तथ्य वर्तमान संपादक औरपत्रकारों को दिशा निर्देश देगा की वो किन वर्गों से संबंधित पत्रकारिता करें। साथ ही यह पत्र आम जन को शोषण के प्रति सचेत करेगा।

शोध प्रविधि-

- अंतरवस्तु विश्लेषण
- ऐतिहासिक प्रविधि

शोध सीमा-

प्रस्तुत शोध पत्र केवल द्वितीयक साहित्यों के आधार पर लिखा गया है। शोध पत्र के अंतर्गत नवजागरण के सवालों में से स्वतंत्रता आंदोलन को लिया गया है।

निष्कर्ष-

नवजागरण के प्रारंभ से अनेक सवाल देश के सामने थे। द्विवेदी जी ने उन सवालों में से दरिद्रता और पराधीनता को प्रमुख सवाल बनाया। उन्होंने तार्किक ढंग से यह बताया की दरिद्रता का मूल कारण पराधीनता है। उन्होंने देश सेवा को केन्द्रित करते हुये कहा'किसान सेवा हि राष्ट्र सेवा है'। उनके लेखन के मुख्य तत्व थे उनका वस्तुनिष्ठ व व्यावहारिक दृष्टिकोण। उन्होंने अपने लेखन में केवल सवाल हि नहीं खड़े किए अपितु जवाब भी दिए। उन्होंने पढ़े-लिखे लोगो तक इस बात को संचारित किया की पराधीनता हि भारतीय गरीबी का मूल कारण है। उस समय के किसान द्विवेदी जी की लेखनी से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित न होकर उनकी लेखनी से उपजे ओपेनियन लीडर के माध्यम से लाभान्वित होते थे। द्विविदी जी का उनके युग की पत्रकारिता पर प्रभाव पड़ा अतः उस युग में तमाम दिक्कतों के बाद भी अंग्रेजी शासन के विरोध में लेखन जारी रहा साथ हि समाज के अन्य विषय जैसे विधवा विवाह, सती प्रथा, जाति व्यवस्था आदि के विरोध में भी लिखा जाने लगा। उस युग की पत्रकारिता में समाज के सभी विषयों को खासकर हसिए के विषयों को स्थान मिलने के कारण सभी वर्गों का अंग्रेजी शासन के विरोध में स्वर उठने लगा और स्वतंत्रता आंदोलन की वैचारिकी तैयार हो गई।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नटराजन जे., भारतीय पत्रकारिता का इतिहास , प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, 2002
2. मेहता आलोक,भारत में पत्रकारिता, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, 2011
3. हेमंत, योद्धा पत्रकार, मा. च.रा.प.स.वि.वि., भोपाल, 2008
4. गोदरे विनोद, हिंदी पत्रकारिता स्वरुप एवं संदर्भ,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
5. श्रीधर विजयदत्त, पहला संपादकीय, सामयिक प्रकाशन, 2011
6. राजगढ़िया विष्णु, जनसंचार : सिद्धान्त और अनुप्रयोग, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011

7. शर्मा रामविलास, महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008

अमृत कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर, जनसंचार विभाग, झारखण्ड केन्द्रीय विश्वविद्यालय, रांची.

LBP PUBLICATION